Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)*with* International Impact Factor 8.357
Peer Reviewed Journal
https://doi.org/10.69758/GIMRJ/2512S01V13P019

e-ISSN No. 2394-8426
Special Issue on Scientific Research Dec'25
Issue–XII(I), Volume–XIII

डॉ. विवेकी राय के उपन्यासों का सामाजिक अध्ययन

डॉ. अमलपुरे सूर्यकांत विश्वनाथ

सारांश :-

ग्राम-जीवन और लोक-संस्कृति के प्रति समर्पित रचनाकार डॉ. विवेकी राय का व्यक्तित्व सहज, निश्छल, सहदय और गरिमाशाली है तो कृतित्व वैविध्यपूर्ण, सरल, बहुआयामी एवं यशस्वी है। निराशा और थकान उनके पास नहीं फटकते हैं। सरलता और विनम्रता उनके आभूषण हैं। उनका व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों अजातशत्रु है। उनके उपण्यासो में समकालीन यथार्थ का प्रतिबिम्बन कुछ इस ढंग से हुआ है कि गाँवों में बसी भारतीय आत्मा का रेखाचित्र उभरा है। सर्वत्र कथाकार ने निरपेक्ष भाव से चित्रण किया है स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् ग्राम-जीवन में आये बदलाव को नये दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। नारी जीवन की दुर्दशा पर, अशिक्षा और अर्थ के अभाव से पीड़ित ग्राम-जीवन की विकृतियों, असंगतियों,गाँव का समूचा परिवेश, रीति-रिवाज, वस्तु शिल्प और संवेदना उभरी है। प्राचीन मान्यता ऋणभीरुता, परलोक भय के स्थान पर उपजे ऋण प्रतिष्ठा के नये मूल्य ने समाज को खोखला कर दिया है।

कुंजी शब्द :- सामाजिकता नागरी जीवन परंपरा सांस्कृतिक मूल्य औपचारिकता त्योहार मूल्य संक्रमण आदि।

संशोधन पद्धति :- सर्वेक्षणात्मक तथा विश्लेषणात्मक पद्धति।

संशोधन के उद्देश्य :-

१) डॉ. विवेकी राय का जीवन परिचय को देखना।

२) डॉ. विवेकी राय के उपन्यासों को देखना।

३) डॉ.विवेकी राय के उपन्यासों में सामाजिकता को देखना ।

४) विवेकी राय के उपन्यासों में सामाजिक मूल्यों का चित्रण करना।

५) डॉ .विवेकी राय के उपन्यासों में सामाजिकता के अंतर्गत विभिन्न सामाजिक समस्या का विवेचन करना।

प्रस्तावना :-

डॉ. विवेक राय का रचनाकार व्यक्तित्व बहुआयामी है। यद्यपि वे मूलतः कहानी, उपन्यास, निबंध सभी विद्या में प्रसिध्द रचनाकार हैं। प्रेमचंद की परम्परा के आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी साहित्यकार थे। उनकी रचना का उद्देश्य "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय था। वस्तुतः साहित्य का उद्देश्य यही होना चाहिए। उनका साहित्य केवल मनोरंजन के लिए नहीं है, जीवनयात्रा का पाथेय भी है।धरती पर अपना सपना उतारने के लिए है। जैसे सुगंध सीमा तोड़कर सबके पास पहुँचाती है। जमीन के साथ ही जुड़कर हम महक सकते हैं। ऐसा ही विवेकी राय के साहित्य में गाँव की खेती की महक उठती है। वे जानते हैं कि धरती पर शूल-फूल दोनों उगते हैं। सो शूल के पैरों की रक्षा के लिए वे धरती को चर्माच्छादित करने की मूढ़ता नहीं पालते, वे तो पैरों में अपने-अपने नाप का जूता पहन लेने का विवेक जगाते दिखाई देते हैं।

डॉ. विवेक राय के उपन्यासों का सामाजिक अध्ययन

आधुनिक संक्रामक स्थितियों ने तथा स्वातंत्र्योत्तर कालखंड की मोहभंग की स्थितियों ने परम्परागत सामाजिक मूल्य, पारिवारिक दायित्व में एक नया मोड़ लाया है। नये विकास और नगर सम्पर्क के कारण गाँवों का सामाजिक चेहरा बदलता गया और उसका परम्परागत रूप भी टूट गया। परिस्थितियों के अनुरूप नये मूल्य रेखांकित होने लगे हैं। गाँव का समूह जीवन और प्रतिष्ठाका मूल्य ध्वस्त हुआ। गाँव धर्म के स्थान पर अर्थ, भाईचारे की जगह पार्टीबन्दी में जकड़ गया। इस संदर्भ में डॉ. विवेकी राय ने कहा है, "स्वातंत्र्योत्तर दो दशक के उलझाव के बाद उसकी सामाजिक क्रांति को सही दिशा मिलने के लक्षण कृषि क्रान्ति के बाद यद्यपि शनैः शनै दृष्टिगोचर होने लगे हैं। परन्तु पृष्ठभूमि में मात्र आर्थिक विकास, उद्योग और यंत्र प्रसार होने से गाँवों में सुरक्षित मानवीय मूल्यों का भविष्य अंधकारामय हो जाना सम्भावित प्रतीत होता है।"-१ ग्रामांचल की मूल्य टूटन की पीड़ा को विवेकी राय ने 'बबूल', 'लोकऋण', 'समर शेष है', 'मंगल भवन', 'नुमामि ग्रामम् आदि उपन्यासों में प्रस्तुत किया है।

बबूल' :- १९६७ में प्रकशित हुआ है। इसमें विवेकी राय ने यह स्पष्ट किया है कि, आज गाँव के लोग पद और प्रतिष्ठा के कारण छोटे-छोटे और गरीब लोगों की पूछताछ भी नहीं करते हैं। यह स्थिति पहले नहीं थी। एक-दूसरे के दुःख से दुःखी हो जाने का मूल्य आज पद और प्रतिष्ठा के कारण कैसे टूट रहा है। इस पर सोचते हुए 'बबूल' का मास्टर गरीब दरपनी के सम्बन्ध में कहता है- "इच्छा हुई कि रोककर पूछें कि तुम कैसी हो जी? कैसे जीती हो जी? मगर ऐसा न कर सका। मेरे बड़प्पन, मेरी पोशाक, मेरे गौरव, मेरी मर्यादा, मेरे पद और घमंड ने मुझे ऐसा करने से रोक दिया। मन में मथ उठा कोई। तुम आदमी नहीं रह गये क्या?"-२ मास्टर महेसवा और उसकी माँ दरपनी की गरीबी का हाल मूल्य टूटन के कारण पूछ नहीं सकता है। इससे लेखक दुःखी होते हैं। ग्राम जीवन में आजकल कथनी और करनी में अन्तर आ रहा है। दिखावा या प्रदर्शन को महत्त्व दिया जा रहा है। आदर्शपूर्ण बातें करते हुए अपने आपको बड़ा सिद्ध करने का प्रयास होता जा रहा है। महेसवा जैसे गरीबी से पीड़ित व्यक्ति को मनुष्य के रूप में देखा नहीं जाता इस स्थिति पर प्रतिक्रिया प्रकट करते हुए मास्टर जी कहते हैं- "जिस प्रकार मन के भीतर का कूड़ा करकट कौन देखता है? बाहर मुँह से सेवा-त्याग और अपरिग्रह-अस्तेय आदि की विमल वार्ता प्रकाशित होना चाहिए।"-३ यहाँ मानवता के मूल्य टूटन की स्थिति पर लेखक ने चिन्ता प्रकट की है। नागरीकरण की हवा से गाँवों में स्वच्छन्द और मुक्त जीवन धूसर होने लगा है।

'लोकऋण' :- १९७७ में प्रकशित हुआ है। इस उपन्यास में परम्परागत गाँवों की एकता, विश्वासाहार्यता, स्वातंत्र्योत्तर बदलती हवा के कारण डाँवाडोल हो गई हैं। सामूहिक रूप से मनाये जाने वाले उत्सव, पर्व, मेले बिखर चुके हैं। मंदिरों में चोरी करना, कलश को ढहाना, यात्रियों के लिए बनवायी धर्मशाला को हड़पना आदि में हिचकिचाहट नहीं हो रही है। धार्मिक एवं सांस्कृतिक मूल्य टूटन सेगाँव पीड़ित होते जा रहे हैं। इन सभी का वर्णन 'लोकऋण' में आया है। सभापति त्रिभुवन के किये कार्यों के बारे में सोचते हुए गिरीश कहता है- "वह चन्दन घिसने वाला और विल्व पत्र पर रामनाम लिख शिवार्पण करने वाला गाँव मर गया।"-४ यहाँ धार्मिक मूल्यों की टूटन पर प्रकाश डाला है। सभापति त्रिभुवन के बड़े भाई धरमू गाँधीवाद से प्रभावित और स्वातंत्र्य सेनानी हैं जिससे गाँव और गाँववासियों की बदलती मानसिकता, त्रिभुवन की लालची वृत्ति, हड़पनीति, चुनाव का घिनौना रूप देखकर, उसकी डॉट-फटकार सुनकर

निराश हो जाता है, ऐसी स्थिति में उसका सिरताज बाबा के दरबार में जाकर गाँजा पीना, नशापान करना, पथभ्रष्ट होना है जिससे आदर्शवादी मूल्य टूटन की स्थिति स्पष्ट हो जाती है। 'लोकऋण' का गिरीश शहर की नौकरी से अवकाश ग्रहण करने के बाद गाँव में रहना चाहता है लेकिन गाँव की बिगड़ी हुई स्थिति, आत्मीयताहीन वातावरण देखकर निराश हो जाता है। गाँव में कहाँ और किसके पास बैठा जाय यह प्रश्न उसके सामने उभरता है। यह सोचता है- "गाँव में कोई समाज नहीं रह गया। कहीं स्थान नहीं जहाँ जाकर घड़ी भर बैठे ! कोई आदमी नहीं जिससे खुले मन दो-दो बातें हों। एक अपरिभाषित भय, तनाव और अनिश्चितता टँगी है।"-५ इस उपन्यास में आधुनिक साधन, यातायात, नागरी आकर्षण, सुधार योजनाएँ, षड्यंत्री राजनीति आदि से ग्राम जीवन का भटकाव दिखाया है। इस भटकाव में ग्राम जीवन ने अपनी शांति खो दी है, गाँव मूल्य टूटने से पीड़ित हो गया है। ऐसी दशा देश के प्रत्येक गाँव की बनी है। इस सम्बन्ध में गिरीश कहता है- "बेहयाई, नंगई और थेथरपन के साथ बहुत कुछ कहा जा सकता है। क्या अव नंगई को भी अन्तिम रूप से एक जीवन मूल्य के रूप में स्वीकार करना पड़ेगा ? गाँव को स्वर्ग बनाने वाले संस्थानिक परिवर्तनों की उपलब्धि यही नंगई रही?"-६ स्वराज्य के बाद प्रजातांत्रिक मूल्यों के कारण ग्रामीण जीवन में होने वाले अवमूल्यन की पीड़ा से यह उपन्यास परिपूर्ण है। लेखक के मतानुसार आज का गाँव जीवन परम्परागत सम्बन्धों से सम्बन्धहीनता की ओर, मूल्य से मूल्यहीनता की ओर बढ़ता जा रहा है। 'लोकऋण' में चित्रित मूल्य टूटन के सम्बन्ध में डॉ. सत्यकाम ने कहा है- "नागर जीवन की व्यक्तिवादिता का प्रभाव गाँवों पर भी पड़ रहा है। इसमें गाँव की आत्मा नष्ट हो रही है। उपन्यासकार ने गाँव के नष्ट होने की इसी प्रक्रिया का अंकन इस उपन्यास में किया है।" ७

'समर शेष है' :- १९८८ में प्रकशित हुआ है। इसमें ग्राम जीवन की शैली में आया बदलाव, इससे उत्पन्न टूटनशीलता की ओर निर्देश किया है।झूठ और असत्य ही जीवन का आधार बनता जा रहा है। इस पर संतोषी मास्टर प्रतिक्रिया स्पष्ट करते हुए कहता है- "हम लोगों को गलत जीवन जीने का अभ्यास हो गया है। हम लोग पग-पग पर झूठ और असत्य से समझौता कर बुराइयों की जड़ को अनजाने अधिक-से-अधिक मजबूत करके चलते हैं। क्या सचमुच सम्पूर्ण समाज पाखंड की नींव पर नहीं खड़ा है? "-८ यहाँ मूल्य टूटन से पीडित ग्रामीण जीवन पद्धति पर प्रकाश डाला है। आज भौतिक सम्पन्नता को जीवन का आधार मानने के कारण ग्राम जीवन दिशाहीन बन रहा है। इससे निर्माण होने वाली मूल्य टूटन की पीड़ा के सम्बन्ध में सुराज कहता है- "आज तो जीवन के सारे मूल्य समाप्त हो गए हैं और एक मूल्य रह गया है कि जैसे भी भौतिक जीवन की सम्पन्नता बटोरें।"-९ यहाँ भौतिक सुखवादी जीवन प्रणाली के आक्रमण से गाँवों में जो टूटनशीलता निर्माण हो रही है। सुराज का इंजीनियर भाई विराज अपने पिता के प्रति जो अनादर का भाव पं. संतोषी मास्टर के पास व्यक्त करता है इससे नैतिक मूल्य टूटन की स्थिति स्पष्ट होती है- "उस बुड्ढे का दिमाग खराब हो गया है।... खेत के नाम पर तमाम जमीन लपेटकर नास कर रहा है। खाने भर को भी अनाज नहीं होता। मैं कितना सँभालूँ?. ... जमीन पीठ पर लादकर नहीं ले जायेंगे।"-१० यहाँ शिक्षितों का बुजुर्गों के प्रति होने वाला अनास्था का भाव मूल्य टूटन का उदाहरण है। यह मूल्य टूटन की स्थिति मनुष्यहीनता का एक रूप बनकर विस्तारित हो रही है। इस पर लेखक ने प्रकाश डाला है। इस टूटते हुए मूल्य के संधिकाल में गाँवों से शहर जाने वाली नई पीढ़ी पर बुरे संस्कार हावी हो रहे हैं।

सुराज का छोटा भाई रामराज इसका अच्छा उदाहरण है जो शहर में रहकर बिगड़ जाता है। रामराज आत्मग्लानि से पंडित संतोषी मास्टर के पास अपने भाव को व्यक्त करते हुए कहता है- 'गुरुजी, लगता है सब कुछ खतम हो गया। यह कैसा समय आया है जो सिर्फ तोड़ रहा है। हम न पढ़ाई से जुड़े रहे हैं, न नौकरी से, न मौजूदा सामाजिक जीवन से और न अपने परिवार से।"-११ इस उपन्यास के सम्बन्ध में डॉ. सत्यकाम ने सही कहा है- "भद्दी स्थिति आज का कटु यथार्थ है, जिसे विवेकी राय ने अपने उपन्यास 'समर शेष है' का केन्द्रीय कथ्य बनाया है। हालाँकि उपन्यासकार ने गाँव को केन्द्र में रखा है, पर जहाँ तक अँधेरे और भद्दी स्थिति का सवाल है, वह भी सभी जगहों पर लागू है ।" -१२ यह भद्दी स्थिति मूल्य टूटन का ही एक रूप है जिसे लेखक ने उपन्यास में वाणी दी है।

'सोना माटी :- १९८३ में प्रकशित हुआ है। इसमें आधुनिकता के कारण मनुष्य भीड़ में भी अकेलापन महसूस करता है। उसका आत्मकेन्द्री रूप को स्पष्ट किया है। बदलते ग्रामीण जीवन की बदलती मानसिकता से उत्पत्र टूटन पर प्रकाश डालते हुए मास्टर रामरूप कहता है- "आज के आदमी के साथ यह कैसे भीषण विडम्बना जुड़ी है कि वह एकान्त में रहकर भी भीड़ से घिरा रहता है और भीड़ में पड़ने पर अकेला हो जाता है।"-१३ आधुनिकता और नागरीकरण के प्रभाव के कारण गाँव जीवन के परम्परागत रूप, श्रद्धास्थल, त्योहार, उत्सव-पर्व के प्रति अनास्था का भाव फैलता गया है जिससे परम्पराओं में टूटनशीलता आ गई। इससे ग्राम जीवन विखरता गया है। मास्टर रामरूप इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए कहता है- "क्या युगीन आपाधापी और बुद्धिवाद ने सचमुच हमें वहाँ पहुँचा दिया है... पर्व त्योहार और मेलों की कोई सार्थकता भी है? किन्तु क्या सार्थकता बोध के रास्ते पांइट की वास्तविकता की पकड़ सम्भव है? वास्तव में प्रापंचिक सार्थकता के विसर्जन पूर्वक मुक्तानन्द की यह सांस्कृतिक प्रक्रिया वैज्ञानिक और राजनीतिक सभ्यता के क्रमिक धक्के से टूट रही है।.. किन्तु वर्तमान में नगर प्रभावित मूल्यानुसंक्रमण की चपेट में सिकुड़ते गाँव अपने सांस्कृतिक मेरुदंड तथा जीवन की आनंदधारा के सनातन स्रोत मेलों पर्वों की बलि देकर नगर विकास की गहरी कीमत चुका रहे हैं।"-१४ यहाँ गाँवों के सांस्कृतिक मूल्य टूटनशीलता को स्पष्ट किया है। सांस्कृतिक मूल्य टूटन के मूल में अर्थ मूलक दृष्टि प्रमुख कारण है। इस पर व्यंग्य करते हुए मास्टर रामरूप कहता है- "सामाजिक विघटन और त्योहारों के टूटन में सम्बन्ध तो है परन्तु वह दुतरफा या एकतरफा समांतरता है और दोनों को प्रभावित करने वाली यह सत्यानाशी अर्थमूलक दृष्टि है, जिसने सांस्कृतिक धरती को बंजर कर दिया...। "१५

'नमामि ग्रामम् :- १९६६ में प्रकशित हुआ है। इसमें बदलाव की हवा ने ग्रामीण जीवन को झकझोर दिया है। फैशन और व्यसनाधीनता बढ़ती गई, ग्रामवासियों की धर्म और दर्शन सम्बन्धी भावनाएँ बदलती गई। रूढ़ि-परम्परा के नाम पर त्योहार, व्रत, दान, होम, संकल्प आदि में औपचारिकता आयी, निस्सीम भक्तिभाव से इन सबकी महत्ता स्वीकार नहीं होती, व्रत-तीर्थ आदि में आस्था नहीं रही, कृष्ण जन्माष्टमी, राम नवमी के निमित्त मन्दिर और मठों पर दिया जाने वाला 'सीधा' व्यर्थ माना जाने लगा। इस स्थिति पर 'नमामि ग्रामम्' में बूढ़ा गाँव कहता है- "लोग धीरे-धीरे जानने लगे हैं, यह सब दान आदि व्यर्थ है। हृदय की श्रद्धा नष्ट हो गई। जैसे आदमी आदमी न रह गया, वह आज बुद्धि और तर्क की मशीन हो गया है। "- १६

इस प्रकार यहाँ ग्रामीण जीवन कीसांस्कृतिक मूल्य टूटन पर प्रकाश डाला है। एकादशी के दिन व्रत रखने का रिवाज धीरे-धीरे समाप्त होता जा रहा है। लोग एकदम स्वतन्त्र हो गए हैं। मन पर धर्म या ईश्वर का शासन नहीं है। पहले लोग अशिक्षित अवस्था में अन्धविश्वास के कारण भी कुछ सुमार्ग पर बढ़ते थे। अब शिक्षा प्रसार का पहला प्रहार ऐसी ही वस्तुओं पर हुआ है। लेखक ने इसी पीड़ा को यहाँ व्यक्त किया है। आज राजनीति के प्रभाव से मनुष्य स्वार्थी हो गया है। वह सार्वजनिक कार्यों को बेवकूफी समझता है। 'जो करे, सरकार करें जैसी मानसिकता बढ़ती जा रही है। सहयोग संगठन रहा नहीं, धर्मभीरुता नाम की चीज का सर्वथा लोप हो गया, सेवा-सद्भाव में भी शुद्ध स्वार्थ और हड़प नीति पर हिंसा का विचार बढ़ता जा रहा है। बलवान कमजोरों को हड़प करने में हिचकते नहीं। इस स्थिति पर बूढ़े गाँव का कहना है- "जब एक बलवान किसान अपने डाँड़ के कमजोर किसान की भूमि कुछ अधिक बढ़ाकर अपने में मिला लेता है। कमजोर बेचारा टॉय-टॉय करता रहता है।" -१७ गाँव के संघर्षशील मूल्यों के बीच की टकराहट के दर्शन होते हैं। इस पर चिन्ता प्रकट करते हुए 'नमामि ग्रामम्' का बूढ़ा गाँव कहता है- "आज एक बात दुःखप्रद हो गई है। गाँव के बाहर होते ही बालकों को अपने-पराए बाग और अधिकार की भावना सताने लगती है। जमाना न रहा कि बच्चे सबके बगीचे को अपना समझें। राजनीति ने गाँव में घुस सत्यानाश कर दिया! बहुत धोखा दिया देश के बुद्धिमान कहे जाने वाले बड़े-बड़े लोगों ने। "- १८ बदलते समय के साथ ग्राम जीवन की सादगी भ्रष्ट होती गई, विश्वास की जगह अविश्वास, कपट, दुष्टता, चोरी आदि प्रवृत्तियाँ उभर रहीं। चोरी करने की उभरती प्रवृत्ति की ओर निर्देश करते हुए बूढ़ा गाँव कहता है- "कोई चीज बाहर पड़ी है.... उसमें पंख लग गए और देखते-ही-देखते अन्तर्धान हो जाती है।" -१९

कुएँ पर पड़ी रस्सी की चोरी होती है। बैल तक गुम हो जाते हैं। अब तो बालकों को गायब कर मवेशियों की भाँति 'पनहा' लेने की घटनाएँ भी घटने लगी हैं। पम्पिंग सेट, ट्रान्सफार्मर की चोरियों के साथ हत्याओं की बाढ़ आ गई। फसलों की चोरी आम बात है। छोटे-छोटे बच्चों को चोरी सिखाई जाती है। यहाँ ग्रामीण जीवन की ईमानदारी तथा प्रामाणिकता में आयी टूटनशीलता पर प्रकाश डाला है। इस प्रकार 'नमामि ग्रामम् में नैतिक मूल्य टूटन पर भी दुःख प्रकट किया है। आज हर क्षेत्र में मूल्य टूटन की स्थिति गहरा रही है- "ईमान और नैतिकताबेचकर शीघ्र धनी हो जाने की होड़-सी लग गई। घर में, रास्ते में, रेल में, दूकान पर, मन्दिर में, तीर्थ में, विकास कार्यालय में और स्कूलों आदि में नैतिक अधःपात के भयानक पैंतरे दृष्टिगोचर होने लगे।"-२० यहाँ नैतिक टूटन पर प्रकाश डाला है। सभ्यता और वैचारिक रूप में आए हुए मूल्य परिवर्तन स्पष्ट होते हैं। गाँवों के पतन की वास्तविकता को चित्रित करने में 'लोकऋण' महत्त्वपूर्ण कृति रही है। इस सन्दर्भ में डॉ. हेतु भारद्वाज ने कहा है- "गाँवों के पतन की यह गाथा इसलिए और विश्वसनीय बन गई है कि लेखक ने सारी समस्याओं और सारे परिवर्तन को समय की धारा के प्रवाह के बीच रखकर देखा है। .... लेखक ने भौगोलिक रूप से विकसित तथा मूल्यों की दृष्टि से 'खोखले' गाँव के विकास में सक्रिय सभी सूत्रों को इतिहास के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। इस दृष्टि से यह कृति ग्रामीण लोक जीवन का महाकाव्य बन गई है। ग्रामीण जीवन को रूपायित करने वाला सशक्त दस्तावेज है।"-२१

निष्कर्ष :-

उपयुक्त विवेचन के अनुरूप निष्कर्ष रूप से कह सकते है की, डॉ. विवेक राय के उपन्यासो में समाजिकता के अंतर्गत शिक्षा प्रसार, व्यक्ति स्वातंत्र्य, नागरी प्रभाव आदि अनेक कारणों से परम्परागत ग्रामीण जीवन जड़ से हिल गया है। उनकी मान्यताएँ, आतिथ्य भाव, आत्मीय भाव, एकता, खुलापन, आदरभाव श्रद्धा आदि मूल्य टूटते गए। शिक्षा प्रसार ने मनुष्य को आत्मकेन्द्री बनाया। व्यक्ति स्वातंत्र्य की अवास्तव कल्पना ने एक-दूसरे के प्रति स्थित विश्वास और आत्मीय भाव आदि उपन्यासों में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है।

सन्दर्भ ग्रंथ :-

१.डॉ. विवेकी राय - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम जीवन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद पृ.३१७
२.विवेकी राय- बबूल, हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, पृ. ३१
३.वही, पृ. १५७
४. डॉ. विवेकी राय - लोकऋण पृ. ६६
५.वही, पृ. ३२
६.वही, पृ.१०३
७. वही, पृ. १२२
८. डॉ. विवेकी राय -समर शेष है, पृ. ५६
९. वही, पृ. १४३
१०. वही, पृ. ११२
११. वही, पृ. १३४
१२.डॉ. सत्यकाम्, माटी की महक, अभिरुचि प्रकाशन, दिल्ली, पृ. ७६
१३.विवेकी राय- सोना माटी प्रमात प्रकाशन, दिल्ली, पृ . २६८
१४.वही, पृ. ३३
१५.वही, पृ. २१७
१६.विवेकी राय, नमामि ग्रामम्, विद्या विहार, दिल्ली, पृ. ११२
१७.वही, पृ. ११५
१८.वही, पृ. ७२-७३
१९.वही, पृ. १५६
२०. वही पृ. १२२
२१ .डॉ. सर्वजीत राय-टूटते हुए गाँव का दस्तावेज, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. १७